॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

मेरे पवित्र भगवान्! हे देव! आज तू उस यज्ञ कर्म को महान् बना। हे विधाता! जिस सुन्दर यज्ञ में आपकी महान् अनुपम कृपा के द्वारा ही हमारा जीवन पनपता है, जिस दया के द्वारा हमारे जीवन का संचालन होता है। आज हम अपने जीवन का संचार चाहते हैं। हे पवित्र बनाने वाले देव! हमारे नमस्कार को स्वीकार करो जिससे विधाता! उज्ज्वल यज्ञ कर्मों में हमारे जीवन की जो संलग्नता है वह ऊँची और विलक्षण बनती चली जाए। हे परमात्मन! हे देव! हे सखा। तू हमारे जीवन का संचार करने वाला है। हे प्रभु! जब यज्ञ में अपने जीवन को ले जाते हैं, यज्ञमय जीवन बना देते हैं तो हमारे जीवन की जो स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ हैं उनकी वास्तव में सुगन्धी के साथ-साथ ऊँची तरंगें अन्तरिक्ष में रमण करती हैं। जैसे वाक् से उच्चारण होते ही उसका विस्तार रूप बन जाता है इसी प्रकार यज्ञशाला में एक ब्रह्मा, उद्गाता मनोहर वेद मन्त्रों का पठन-पाठन करता है। वही सुगन्धित सहित शब्दार्थ देवताओं को पवित्र बना देते हैं। आओ! मेरे भद्र आचार्य जनों! ऋषि मण्डल! आज हम सुन्दर यज्ञ करने में संलग्न होते चले जायें।

पूज्यपाद गुरुदेव

(यज्ञ प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्त्व प्रवचन दिनांक 19 जुलाई 1966)

अंक : 478 समग्र अंग : 553
वर्ष : 40 समग्र अंग : 47

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	प्रभु से विनय	पूज्यपाद गुरुदेव	1
2.	देवासुर-संग्राम	पूज्यपाद गुरुदेव	2-18
3.	यज्ञ	पूज्यपाद गुरुदेव	19-22
4.	रक्षा बन्धन	पूज्य महर्षि महानन्द जी	23-27
5.	दान, सूचना, पुस्तकों की सूची इत्यादि		28-32

श्रावणी पर्व

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा और पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की पावमानी प्रेरणा से **रक्षाबन्धन** के शुभावसर पर दिनाँक 2.8.2012 दिन बृहस्पतिवार को प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी लाक्षागृह, बरनावा में सामवेद ब्रह्म परायण महायज्ञ का आयोजन श्री गाँधी धाम समिति (पंजी) द्वारा किया जा रहा है। आप सभी इस यज्ञ में अपने परिवार, सगे-सम्बन्धियों एवं मित्रों सहित सादर आमंत्रित हैं।

श्री गांधी धाम समिति (पंजी.)

॥ ओ३म् ॥

देवासुर-संग्राम

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भांति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा कि आज हमने पूर्व से जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहां परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेद-वाणी में उस परमपिता-परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है जो अनन्तमयी है और यज्ञोमयी स्वरूप है। मानो याग उस परमपिता-परमात्मा का आयतन है, उसका गृह है, उसका सदन है और वह प्रायः उसी में वास करता रहता है। **जितने भी मानवीय, आत्मीय-कर्म है वह सर्वत्र मानो एक प्रकार के यज्ञोमयी माने गये हैं।** मानव के अन्तर्हृदय से नाना प्रकार की प्रेरणाओं का उद्‌बोधन होता रहा है और होता रहेगा तो इसीलिए उस **वाक्यं ब्रहे वर्णाः** हम उसको अपने में स्वीकार करते चले जाये और उनमें जो अच्छाईयां है, पवित्रताएं है उन सर्वत्र का नाम याग है इसलिए याग को हमारे यहां वसु कहा है। क्योंकि वसु इसलिए कहा जाता है वह बसाने वाला है। जितने भी मानव में सुक्रियाकलाप होते रहते हैं उनका नाम याग है उन्हीं के कारण मानव बसता है। यह वसा वर्ण मानो इसीलिए उसका नाम वसु है। तो इसलिए मानव को यागाम देखो याग को वसु जान करके उसे प्रायः अपने जीवन में धारण कर लेना चाहिए। तो याग का नाम वसु कहा जाता है। वह बसाने वाला है। तो मुनिवरो! देखो **यागाम् भवितम्** परमात्मा का यह जो संसार है यह एक प्रकार की

यज्ञशाला हैं मानव उसी में वह वास करता है और उसी में रत्त रहता है। जितना भी यह जगत् है चाहे वह किसी प्रकार का वह जगत हो, चाहे जड़वत हो चाहे वह चेतन्यवत हो परन्तु वह सर्वत्र एक परमपिता-परमात्मा का वह वस्तम यह वास माना गया है अथवा उसी में वह निहित रहता है। तो मुनिवरो! देखो यागाम भवितम् वह उसका आयतन है, उसका गृह है, उसका सदन है और वह उसी में मानो रत्त रहने वाला है। तो हम परमपिता-परमात्मा की महिमा अथवा उसके गुणों का गुणवादन करते रहे और गुणाधानम बने जिससे गुणों को अपने में धारयामि बनाते हुए, धारण करते हुए सागर से पार होने को प्रयास करें।

परमपिता-परमात्मा का याग

मेरे प्यारे! आज का हमारा वेदमंत्र हमें नाना प्रकार की वार्ताएं प्रेरणा का स्रोत्र माने गये हैं क्योंकि प्रत्येक मानव वेद-रूपी-ज्ञान से ही प्रेरणा को प्राप्त होता रहा है। तो विचार-विनिमय यह कि जब परमपिता-परमात्मा ने इस संसार-रूपी-यज्ञशाला का निर्माण किया तो बेटा! देखो वह परमपिता-परमात्मा स्वयं ब्रह्मा है, आत्मा यज्ञमान है, और यह पंच जो महाभूत है इनमें से कोई होता है, कोई उद्गाता है, कोई अध्वर्यु है, और कोई पुरोहित बन करके बेटा! आत्मा को पवित्र बनाने में लगा हुआ है। परमात्मा से अपने में प्राण कृतियों को प्राप्त करता रहा है। तो विचार-विनिमय यह मुनिवरो! यह परमात्मा का यज्ञोमयी स्वरूप और यह जो यज्ञशाला है संसार की इसमें नाना प्रकार की सुगन्ध हो रही है नाना प्रकार का भव्य क्रियाकलाप हो रहा है जिस क्रियाकलाप के द्वारा ही मानव अपने जीवन को ऊंचा बनाना चाहता है। तो मेरे प्यारे! देखो वह परमात्मा का एक याग हो रहा है इसी प्रकार याज्ञवल्क्य-मुनि-महाराज ने अपने विचारों में व्यक्त करते हुए कहा है क्या देखो ब्रह्मणे यह **ब्रह्माण्डं पिण्डान् भूत प्रव्हाः** क्या जो पिण्ड में

अथवा ब्रह्माण्ड में जो ब्रह्माण्ड में गतियां हो रही है वही पिण्ड में हो रही है इसलिए हमारे यहां यह सर्वत्र एक यज्ञोमयी स्वरूप माना गया है।

तो आओ मेरे प्यारे! देखो मैं तुम्हें वही ले जाना चाहता हूं। याज्ञवल्क्य मुनि-महाराज ने अपनी एक पोथी का निर्माण किया बारह वर्ष तप करने के पश्चात क्योंकि जो तपस्या करने के पश्चात् अपनी लेखनिया बद्ध करता है वह लेखनिया हृदय के हृदय-ग्राही मानी गई है और वह हृदय से लेखनिया बद्ध करता रहता है। वह अकाट्य होती है उनको कोई मानव दुष्प्रभाव उनका किसी काल में भी ह्रास नहीं हो सकता। वह अपने में पूर्ण होती है क्योंकि हृदय-ग्राही है हृदय से उनका समन्वय रहता है। तो मेरे प्यारे! जब उन्होंने ब्राह्मण इत्यादि की विवेचनाएं और ब्रह्मचारियों की विवेचना प्रगट की तो उन्होंने एक आख्यायिका मानो उद्गीत गाते हुए कहा है क्या देखो सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके एक **देवासुर-संग्राम** हो रहा है और वह देवासु-संग्राम बड़ा विचित्र है। कहीं देवता मानों देखो विजयी हो जाते हैं और कहीं दैत्य विजय हो जाते हैं।

वृषभ का जन्म

तो मेरे प्यारे! देखो जब इनका संघर्ष चलता रहा तो ऐसा कहा जाता है क्या एक समय देवताओं ने दैत्यों को विजय कर लिया। जब दैत्य-राज विजयी हो गये सर्वत्र और देवता मुनिवरो! देखो विजेता को प्राप्त हो गये तो दैत्य अपने में शान्त हो गये। तो कहते हैं कि देवताओं की सभा हुई और सभा में एक आनन्दित मानो विचार-विनिमय होने लगा। तो कहते हैं कि देवताओं की सभा में एक **वृषभ** का जन्म हुआ और उस वृषभ का जब जन्म हुआ तो उसके मुखारबिन्दु से एक ध्वनि उत्पन्न होती थी और जो उस ध्वनि को श्रवण करता वही देवता बन जाता। जब यह संसार सर्वत्र देवताओं का बनने लगा तो मुनिवरो! देवताओं का बनते-बनते वर्णा ब्रहे तो दैत्यों को मानो यह प्रिय नहीं

लगा। दैत्यों ने एक सभा की और दैत्यों ने कहा भई हमारा क्या बनेगा यदि देवताओं की इस प्रकार बलवती हो गई तो हमारा क्या अन्तिम चरण होगा।

असुरों द्वारा वृषभ को छलना

तो मेरे प्यारे! देखो उस समय उन्होंने अपने सभापति विरोचन को निमन्त्रण दिया और सभापति विरोचन जी का आगमन हुआ और विरोचन जी से सभी दैत्यों ने एक स्वर में अपने वाक प्रगट किए कि महाराज हम देवताओं से परास्त हो गये है और देवताओं की सभा में एक वृषभ का जन्म हुआ है उसे वृख भी कहते हैं। परन्तु योग-ध्वनि उसके मुखारबिन्दु से ध्वनि उत्पन्न होती है और जो भी ध्वनि को श्रवण करता है वही देवता बन जाता है। तो हे प्रभु! हमारा क्या बनेगा? तो उस समय महाराजा-विरोचन ने कहा क्या भई तुम दैत्य हो और मेरे द्वारा कोई ऐसा मार्ग नहीं है मेरी इच्छा यह है कि वृषभ को छलो और उसको छल करके मेरे द्वारा लाओ और उसका मन्थन किया जाएगा। मेरे प्यारे! देखो वह दैत्य प्रसन्न हुए उनमें से शुम्भ, निशुम्भ, रक्त-बीज इन तीनों दैत्यों ने अपना कर्म बनाया। मेरे प्यारे! शुम्भ, निशुम्भ, रक्तबीज ने अपना कर्म बनाया क्या आज मध्यरात्रि में हम वृषभ को छलेंगे। तो बेटा! यह वाणी, यह जो तरंगे थी यह मानो वृषभ के द्वार पर पहुंच गई और वृषभ ने मानो इस धरोहर को, देवताओं की धरोहर को मेरे प्यारे! देखो इन्होंने अमृत रेणुका को प्रदान कर दिया। वह ध्वनि तो रेणुका में चली गई। वह अमृतम देखो देवताओं की धरोहर थी। तो मुनिवरो! देखो जब दैत्यों ने मध्यरात्रि में मानो देखो वृषभ को छल लिया, छल लेने के पश्चात् उसे महाराजा-विरोचन के द्वारा लाया गया और विरोचन ने जब उसका मन्थन किया तो उसमें वह ध्वनि नहीं थी। वह देवत्वा मानो ध्वनि उससे चली गई। महाराजा-विरोचन ने कहा भई हे! दैत्यराजो इसमें तो वह ध्वनि नहीं है। उन्होंने कहा महाराज वह

ध्वनि कहा गई? तो क्या वह ध्वनि तो देखो रेणुका में प्रवेश कर गई है।

रेणुका को छलना

मुनिवरो! देखो ब्रह्मणे व्रताः उन्होंने यह विचार बनाया कि आज हम मध्यरात्रि में मानो रेणुका को छलेंगे। मुनिवरो! रेणुका को भी यह तरंगे मानो देखो उनके द्वारा स्पर्श हुई और उन्होंने यह माना की देवताओं की धरोहर को दैत्य मानो दूषित कर देंगे तो रेणुका ने बेटा! देखो उस धरोहर को यज्ञ के दस-पात्रों में समाहित कर दिया तो यज्ञ के दस-पात्रों में बेटा देखो वह समाहित हो गई। मेरे प्यारे! **ब्रह्मणा प्रहाः कृति देवत्वाम् अमृतम** जब मध्य रात्रि का काल हुआ तो दैत्यों ने अपना-अपना कर्म बना करके और रेणुका को उन्होंने छला और रेणुका को छला तो रेणुका ने वह ध्वनि तो पूर्व ही यज्ञ के दस-पात्रों में प्रवेश कर गई थी और बेटा! जब ध्वनि को अमृतम वह रेणुका को लाया गया तो महाराजा विरोचन ने मन्थन किया तो वह ध्वनि विरोचन जी यह कहते हैं हे दैत्यों! इसमें तो वह ध्वनि नहीं है। उन्होंने कहा महाराज कहां गई? क्या अब तुम इस ध्वनि को निकास नहीं सकोगे वह ध्वनि तो रेणुका ने मानो देखो **यज्ञ के दस-पात्रों में समाहित कर दी** है और यज्ञ के किसी न किसी पात्र में मानों देखो वह ध्वनि अवश्य रहेगी। इसलिए तुम सर्वत्र ध्वनि को अपने में समेट नहीं सकोगे।

वृषभ, रेणुका क्या है?

तो मेरे पुत्रो! देखो जब उन्होंने यह कहा तो अवन्नम ब्रहे वह शान्त हो गये। तो मेरे प्यारे! विचार आता है कि याज्ञवल्क्य-मुनि-महाराज ने शतपथ-ब्राह्मण में यह वर्णन किया और उन्होंने कहा कि देखो रेणुका क्या है? वृषभ क्या है? और दैत्य और देवता क्या है? बेटा! वहां जब हम साधना में प्रवेश होते हैं तो हमारे इस हृदय रूपी जो यज्ञशाला है

मानो देखो जो शरीर-रूपी-यज्ञशाला है इसमें प्रायः देवासुर-संग्राम हो रहा है। कहीं देव प्रवृत्ति है तो कहीं असुर प्रवृत्ति है तो दोनों प्रकार का मानो देखो दोनों में संघर्ष होता रहता है। दैत्यों और देवताओं में जो इस प्रकार का भयंकर संग्राम हुआ तो एक समय देवताओं ने दैत्यों को विजय कर लिया। मेरे प्यारे! जब दैत्य विजयी हो गये तो देवताओं की सभा में एक आनन्दवत मानो देखो विजय के पश्चात् एक आनन्द घोषणा होती है और वह घोषणा मुनिवरो देखो घोषणा का दूतक उन्होंने वृषभ को बनाया। तो हमारे यहां वैदिक साहित्य में बेटा! **वृषभ नाम मन को कहा जाता है** यह मन के द्वारा मुनिवरो! देखो देवताओं ने यह धर्म-ध्वनि को मानो देखो मन को समर्पित कर दिया और यह कहा कि तुम ध्वनि को और जो धर्म की वार्ता श्रवण करता है वही देवता बनने लगा क्योंकि धर्मज्ञ ब्रह्मा धर्मेग्यस्वतः प्रव्हा यह धर्म ही मानव को ऊर्ध्वा में ले जाता है विचार आता है कि धर्म क्या है जिसे मानो देखो मन पवित्र जब हो जाता है तो मन से प्रेरणा अथवा एक ध्वनि उत्पन्न होती है और उस ध्वनि का नाम ही मुनिवरो! देखो **धर्म** कहा जाता है जो देवताओं के मुखारबिन्दु से निकली हुई ध्वनि है मुनिवरो! देखो वही तो ध्वनि है जिसका समन्वय हृदय से रहता है और वह ध्वनि जब होती है तो उसका समन्वय उत्पन्न मन से होता हुआ और जो मन के उद्गारों को श्रवण करता है, पवित्रता को वह पवित्र होता चला जाता है इसलिए महापुरुष मेरे प्यारे! देखो विद्यालयों में अपने आश्रमों में ब्रह्मचारी, मुनिवरो! देखो ब्रह्मचारी को दीक्षा देते हैं उसका नाम दीक्षा कहा जाता है जब आचार्य और ब्रह्मचारी का दोनों का हृदय पवित्र हो जाता है तो मुनिवरो! देखो वहां दीक्षा का प्राविधान है और दीक्षा प्रदान की जाती है और वह ब्रह्मचारी दीक्षित हो जाता है। तो विचार आता है बेटा! देवताओं की सभा में मानों देखो इस प्रकार जब मनम् ब्रहे वृषभ का जन्म हुआ तो दैत्यों ने मानो शुम्भ, निशुम्भ, रक्तबीज बेटा! देखो वह **मानम् ब्रव्हा शुम्भ** कहते हैं अमृतम् और शुम्भ कहते हैं वर्णाः और

मुनिवरो! देखो **विरोचन कहते हैं सभापति अभिमान को।** मेरे प्यारे! देखो जब **शुम्भु निशुम्भ, रक्तबीज,** रक्तबीज कहते हैं **तृष्णा को।** बेटा! एक तृष्णा मानो बलवती होती नहीं द्वितीय तृष्णा का जन्म हो जाता है। द्वितीय चिन्तन प्रारम्भ हो जाता है इसी प्रकार शुम्भ, निशुम्भ, रक्तबीज इन तीनों दैत्यों ने इस मन को छला क्योंकि मन प्रकृति का तन्तु होने से यह कहीं चेतना में जाता है तो कहीं प्रकृति के क्षेत्र में आ जाता है। यह जहां पवित्र है वहां दूषित भी बहुत ही प्रायः अपने सूक्ष्म समय में हो जाता है।

तो मानो देखो जब इस वृषभ को उन्होंने छल लिया तो इसको जो ज्ञान हो गया था वह देवताओं की धरोहर मेरे प्यारे! देखो वह रेणुका में प्रवेश कर गई। अब रेणुका क्या है? **रेणुका कहते हैं बुद्धि को।** हमारे वैदिक-साहित्य में बुद्धि के नाना-प्रकार माने गये हैं अथवा नाना प्रर्यायवाची शब्दों में इसका वर्णन किया जाता है। जैसे रेणुका कहते हैं बुद्धि को, रेणुका के बहुत से पर्यायवाची शब्द है। रेणुका नाम माता का भी है, रेणुका रात्रि को भी कहते हैं और रेणुका का नाम बुद्धि का है। बेटा! देखो बुद्धि को इसलिए कहते हैं, बुद्धि अमृतम देखो रेणु वृत्त कहा जाता है इसमें तो धर्म ध्वनि रहती है इसलिए इसको रेणुका कहा जाता है रात्रि भी इसी में समाहित हो जाती है मेरे प्यारे! देखो पृथ्वी का नाम भी रेणुका है क्योंकि यह रज सहित नाना प्रकार के खाद्य खनिजों की उत्पत्ति करने वाली है। तो **रणुकाम् ब्रह्मे रेणुका** नाम बुद्धि का है और बुद्धि के कई प्रकार माने गये है। हमारे यहां देखो सुनीता नाम भी बुद्धि का है और हमारी सुनीता के साथ-साथ देखो यह ऋतम्भरा है, यही प्रज्ञा है और यही मेधावी कहलाती है। नाना प्रकार से मानो देखो इसका वर्णन किया जाता है। जब मुनिवरो! देखो **बुद्धि दृष्टिपात करती है और प्रज्ञा मानो देखो उसका अनुभव करती है उसको क्रिया में लाने को प्रयास करती है।** जब वह क्रिया में आ जाती है तो मानो ऋतम्भरा का जन्म होता है। **ऋतम्भरा कहते हैं जान करके मौन हो**

जाना और प्रज्ञा उसे कहते हैं जहां देखो आन्तरिक चित्त में देखो बेटा! सर्वत्रता को जान करके ही परमपिता-परमात्मा का दर्शन करता है। तो मेरे प्यारे! देखो बुद्धि, मेधा और ऋतम्भरा और प्रज्ञावी में प्रवेश हो करके मुनिवरो! देखो सर्वत्र को जान करके अपने में ही मानो देखो अपनेपन का भान करने लगता है।

तो विचार आता रहता है रेणुका नाम बेटा! बुद्धि का है और रेणुका नाम माता को कहते है। माता को उस काल में रेणुका कहते हैं जब माता मानो देखो तमोगुण की आभा में रत्त होती तो उस समय उसको रणुका कहते हैं और मुनिवरो! देखो रात्रि इसलिए की वह प्रकाश को अपने में धारण कर लेती है अन्धकार छा जाता है तो उसका नाम रेणुका है। मानो देखो जो परमाणुओं का संघर्ष होता रहता है और संघर्ष होकर के उन परमाणुओं की ध्वनि को जो मेरे प्यारे! अपने में धारण कर ले उसका नाम रेणुका बुद्धि कहते है।

दस-पात्र

तो विचार आता है बेटा! देखो **बुद्धयाम् भूतम् ब्रह्मा वाचसुतम् ब्रह्मेः।** तो रेणुका में जब वह ध्वनि चली गई तो दैत्यों ने बेटा! उसका छलने का कर्म बनाया और छल करके जब उसे छला गया। मेरे प्यारे! देखो छलने के पश्चात् अमृतम देखो वह यज्ञ के दस-पात्रों में ध्वनि चली गई। वह देवताओं की धरोहर जिसको हमारे यहां **धर्म** कहते हैं। वह धर्म कहां गया मानो यज्ञ के दस-पात्रों में। सृष्टि के पिता ने जब बेटा! देखो इस मानव-शरीर का सृजन किया तो यह मानो देखो आध्यात्मिक और भौतिकवाद से दोनों से ही इसका समन्वय रहता है और समन्वय रहते हुए अमृतम् ब्रह्मा वाचस्सुताः तो मेरे प्यारे! देखो अमृतम् देवताम भू हाः तो वह यज्ञ के दस-पात्र क्या है? देखो बेटा! यागिक याग कर रहा है यहां आध्यात्मिकवाद का वर्णन है। बेटा! देखो **यहां दस-पात्र है और दस मानो देखो इन्द्रियां कहलाई जाती है।** पांच-कर्म-इन्द्रियां और पांच-ज्ञानेन्द्रियां

कहलाती है मानो देखो यह यज्ञ के दस-पात्र कहलाते हैं। यह जो हमारा मानव का शरीर है यह एक प्रकार की यज्ञशाला है और इस यज्ञशाला में दस-पात्र हैं। जो पात्र बन करके बेटा! इसे हूत कर रहे हैं। मेरे प्यारे! देखो नेत्रों का **नेत्र** दृष्टिपात कर रहे हैं अग्नि को साथ ले करके वह स्वाहा कह रहे हैं अपानाय स्वाहा कह रहे हैं, व्यानाम स्वाहा कह करके। मेरे प्यारे! देखो उसमें धर्म समाहित रहता है। नेत्रों का धर्म है दृष्टिपात करना मेरे प्यारे! देखो कुदृष्टिपात करना नहीं है। देखो सुदृष्टिपान करने का नाम धर्म है वही धर्मज्ञ कहलाता है। मुनिवरो! देखो श्रोत्रों से वह सु-शब्दों को ग्रहण करता है, सु-शब्दों को लाना प्रारम्भ करता है और देखो उन शब्दों की ध्वनि कहां तक चली जाती है वह कहीं मानो देखो दिशाओं में से शब्द लाता है, वही ध्वनि मेरे प्यारे! अन्तरिक्ष में रात्रि के काल में देखो वह परमाणुओं का संघर्ष होता उसमें से धीमी-धीमी ध्वनि आ रही है तो उसको यह अपने में श्रवण करता है और वही ध्वनि जो मेरे पुत्रो! देखो अमृतम् ब्रह्मा अन्तःकरण में जो ध्वनियों का जिसे हमारे यहां **अन्नाद** कहते हैं। वह जो मन देखो मस्तिष्क में, वह जो मस्तिष्क की प्रतिभा है और मस्तिष्क में जो अन्नाद स्वर ध्वनि हो रही है, उसको योगेश्वर अपने में धारण करता है। तो मेरे प्यारे! देखो वह शब्दों का श्रवण करना और दार्शनिकता से, मानवीयता से उसको अपने में जब लाता है तो वह ध्वनि कहीं जाती है और वह श्रोत्रों का धर्म है सुशब्द ग्रहण करना अशुद्ध शब्द उसका ग्रहण करने का वह धर्म नहीं कहा जाता। **धर्म कहते हैं सु को।** बेटा! देखो सुदृष्टिपान करना सुवर्णम् ब्रह्मा सुवर्णीया में परणित होना ही हमारा एक कर्तव्य माना जाता है। मेरे प्यारे! देखो घ्राण से सुगन्ध को लेना वह उसका धर्म है देखो असुगन्ध को नहीं लेना। इसी प्रकार वाणी से सत्य उच्चारण करना सत्य रसो को ग्रहण करना यह उसका धर्म है। त्वचा से बेटा! प्रीति युक्त अपने क्रिया-कलापों को करना यह उसका धर्म है। तो बेटा! देखो धर्म कहां है? **धर्म मानव की सर्वत्र इन्द्रियों में निहित हो रहा है।** पांच कर्मेन्द्रियां है सु-कर्म

करना बेटा! यह भुजाओं का कर्तव्य है और इसी प्रकार देखो सु-अमृतम देखो सु-मार्ग को ग्रहण करना यह पगों का कर्तव्य है। इसी प्रकार मुख का कर्तव्य है कि शुभ-पदार्थों का पान करता रहे अपने में विचित्रता को धारण करता रहे। मेरे प्यारे! देखो ध्रुवा और उपस्थ इन दोनों के देवताओं को जानना और देवतापने से अपने जीवन को व्यतीत करना यह सर्वत्र मानो देखो इन्द्रियों का क्रियाकलाप है और इन्द्रियों के क्रियाकलाप का नाम ही धर्म है। धर्म बेटा! कहा रहता है? **मानव की इन्द्रियों में समाहित रहता है।** अरे! वह ध्वनि कहां गई बेटा! वह ध्वनि तो यज्ञ के दस-पात्रों में चली गई है और **यागाम् भूतम् ब्रह्मेः** वही तो याग कहलाता है जहां बेटा! अपने शरीर-रूपी मानो यज्ञशाला को जो पवित्र बनाने वाला है वही तो यज्ञों में प्रवेश करता है, वह याज्ञिक कहलाता है। तो हमें विचारना है कि हम यागिक बने और अपने मानवीय-कर्तव्यों को विचारते हुए सागर से पार होने का प्रयास करे। तो महाराजा-विरोचन ने कहा हे दैत्यराजों! तुम मानो देखो धर्म इन्द्रियों से नहीं निकाल पाओगे। धर्म, यदि धर्म इन्द्रियों से चला जाएगा तो मानव का जीवन निष्क्रिय हो जाएगा मानो मानव जड़वत हो जाएगा। तो इसलिए धर्म को विचारना और धर्म की रक्षा करना यह प्रत्येक मानव का कर्तव्य कहा जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो देवासुर-संग्राम का वर्णन करते हुए आचार्यों ने अपने विचार व्यक्त करते हुए वेद-मन्त्रों का उद्घोष करते हुए कहा है **देवाम् भवतम् भर्ग ब्रह्मा ब्रह्मा ब्रव्हा।** यह देवताओं का जो स्थान है वह भव्य हृदय है। इस हृदय का पवित्र बनाना, हृदय-ग्राही बनाना ही हमारा कर्तव्य है। तो आओ मेरे प्यारे! मैं आज विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट नहीं करूंगा। विचार-विनिमय क्या यह देवासुर-संग्राम मेरे प्यारे! देखो हो रहा है। **दैत्य कौन है?** देखो **काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि मानो देखो यह दैत्य कहलाते हैं** इनका भी देखो दैत्यपना यह सीमा में रहते हैं तो देवताओं की सभा में आ जा सकते हैं परन्तु जब यह अति करे जाते हैं तो देवत्व इससे समाप्त हो जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो प्रत्येक वस्तु सीमा में देवता है, प्रत्येक वस्तु

असीमा में मुनिवरो! देखो अदैत्य रूप धारण कर लेता है। तो आओ मेरे प्यारे! मैं इस सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा नहीं हमारे आचार्यों ने जो भी लेखनिया बद्ध की है उन लेखनियों में दोनों प्रकार माने गये हैं उन्होंने आध्यात्मिकवाद को भौतिकता से समन्वय किया है और भौतिकवाद को आध्यात्मिकवाद में प्रवेश कर दिया है उसे आध्यात्मिक और भौतिकवाद दोनों को अपने में लाने का हमें प्रयास करना चाहिए। अपनेपन में ही वह चिन्तन और मनन करना चाहिए।

महर्षि-याज्ञवल्क्य मुनि-महाराज का उद्‌गीत

तो मेरे प्यारे! देखो आज का विचार क्या जब महर्षि-याज्ञवल्वय-मुनि-महाराज ने शतपथ-ब्राह्मण नाम की पोथी का निर्माण कर लिया। निर्माण करके बेटा! तपस्या का काल उनका पूर्ण हो गया तो याज्ञवल्क्य-मुनि-महाराज ने वहां से गमन किया और भ्रमण करते हुए मुनिवरो! देखो अपने विद्यालय में आ पधारे और विद्यालय में ब्रह्मचारियों ने जब आचार्य का दर्शन किया तो बेटा! उनका हृदय पवित्र हो गया, हृदय गद्‌गद् हो गया और वह उनके चरणों की वन्दना करने लगे। उन्होंने कहा प्रभु! हमारे लिए तपस्या में जा करके क्या वस्तु हमें आप प्रदान करेंगे। तो उन्होंने पोथी का मानो उन्होंने प्रगट अवृति उन्हें प्रदान की और यह कहा ब्रह्मचारियों यह पोथी इसका अध्ययन करो और इसका तुम आचरण करो। इसमें कहा है कि प्रत्येक मानव को यागिक बनना चाहिए और यागाम भूतम ब्रह्मा परन्तु याग देखो, अपने में शान्त हो करके अपनी आत्मा में हूत करना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो इस प्रकार आध्यात्मिक और भौतिकवाद, दोनों का उन्होंने ब्राह्माण्ड से ले करके और मुनिवरो! देखो पृथ्वी के रसातल तक उन्होंने सर्वत्र शतपथ-ब्राह्मण में अपनी वार्ताएं प्रगट की। एक वेद-मन्त्र उन्होंने उच्चारण किया और उच्चारण करके उन्होंने उसी की व्याख्या की है उन्होंने कहा **मन व्रतम् देवत्तया व्रते तपं हृदस्सुतम् ब्रह्मा तपम् देवो ब्रह्मा देवम्दं**

ब्रहे च भवसुति तपाः। ऐसा उद्‌गीत गाते हुए उन्होंने तप की मीमांसा करते अपना विचार दिया है। अब मेरे प्यारे! महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे।

पूज्य-महानन्द-जी के उद्‌गार

ओ३म् यशश्चयाः देवं भद्राः वायु गतं मन्त्रजाऽहम्

मेरे पूज्यपाद-गुरुदेव! अथवा मेरे भद्र ऋषि मण्डल! अभी-अभी मेरे पूज्यपाद-गुरुदेव गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे अथवा उसे गागर, सागर को गागर में भरण करने का प्रयास कर रहे थे। उनके विचारों में मानो कितनी मानवीयता और देखो उसमें कर्त्तव्य-पारायणता रहती है। इसी प्रकार हमारा जो यह जो वाणी, हमारा यह वाणी बन करके अवृतम यह मृत-मण्डल में जहां एक याग का आयोजन हुआ। मेरा अन्तरात्मा यज्ञमान के साथ रहता है और मैं यह कहा करता हूं यह जो काल चल रहा है यह वाम-मार्ग का काल है जहां राजा भी, प्रजा भी दोनों ही वाम-मार्ग की प्रतिभा में निहित हो रहे है। जहां स्वार्थपरता में सुरा और सुन्दरी और मानो द्रव्य की लोलुपतता में मानव अपने जीवन को नष्ट करने जा रहा है। तो यह वाम-मार्ग कहा जाता है। मैंने इससे-पूर्व काल में कहा है क्या **द्रव्य का सदुपयोग करने का नाम ही धर्म है और द्रव्य का सदुपयोग करना ही मानव का कर्त्तव्य है।** मैंने यह वाक् अपने पूज्यपाद-गुरुदेव! से प्रगट कराया। आज मैं राष्ट्रीयता के सम्बन्ध में कोई विचार व्यक्त करना नही चाहता हूं केवल यह क्या मैं एक ही वाक कहा करता हूं कि राजा, राष्ट्र का जो निर्वाचन, वह बुद्धिमान और विवेकी और ब्रह्मवेत्ताओं के द्वारा ब्रह्मवेत्ता का निर्वाचन होना चाहिए। हमारे यहां पुरातन काल में जब वशिष्ठ जैसों को उपाधिया प्रदान की गई तो वशिष्ठ को उस समय चुनौती प्रदान की। जब वह पूर्ण रूपेण ब्रह्मचारी पूर्ण रूपेण मानो देखो वह अपने में एक ब्रह्मवेत्ता बन गया और ब्रहावेत्ता बन करके उसको ब्रह्मर्षि के नामों से उद्‌घोष

किया जाता और वशिष्ठ-मुनि-महाराज मानो देखो जिसे ब्रह्म उपाधि देते उसे उपाधि प्रदान होती थी।

ईश्वर के नाम पर नाना प्रकार की रूढ़ियां

तो विचार आता है मैं यह कहा करता हूँ पूज्यपाद-गुरुदेव! से कि यह विचार, यह प्रणालियां मानो उस काल में समाप्त हो गई जब यहां रूढ़िवाद बलवती हो गया देखो अपने में रूढ़िवाद बन गया ईश्वर के नाम पर नाना प्रकार की रूढ़ियां बलवती हो गई और वह रूढ़ियां मानो देखो ईश्वर के नामों पर हो करके ईश्वर को भिन्न-भिन्न रूपों में और मानव समाज को धर्म से वंचित कर दिया। मानो समाज को वंचित किसने किया इन नाना प्रकार की रूढ़ियों ने और राष्ट्र जिसका जिस रूढ़ि का राजा बन गया उसने धर्म को ही नष्ट करना चाहा। मैं परम्परा की वार्ता क्या देखो महाभारत-काल के पश्चात् की वार्ता प्रगट करता रहता हूं और केवल यह कि यहां नाना देखो मोहम्मद के मानने वालो ने देखो धर्म से मानव को वंचित किया। ईशु के मानने वालों ने धर्म से मानव को वंचित कर दिया है। कर्त्तव्य के ऊपर उन्होंने कोई बल नहीं दिया मानो देखो उसमें नाना प्रकार की अशुद्धियां होने से मानव देखो उन रूढ़ियों को स्वीकार करता है। संसार रूढ़िवादी बन गया और वह रूढ़ि राष्ट्र में चली गई और राष्ट्र में एक मानव मानव के रक्त का पिपासी बन गया। मैं यहां इस सम्बन्ध में इसलिए पूज्यपाद-गुरुदेव! को वर्णन करा रहा हूं राजा रावण का उदाहरण देते हुए पूज्यपाद गुरुदेव! ने मुझे यह प्रगट कराया क्या रावण के राज्य में भी नाना-प्रकार की रूढ़ियां बन गई थी ईश्वर के नाम पर। मानो देखो यह राक्षस यह भी मानो देखो एक धर्मरूढ़ि में परणित हो गया और देखो एक शेव-मत था जो मुनिवरो! देखो ब्रह्मणे! जिसको मेघनाथ स्वीकार करता था एक ऋणीता मानो सम्प्रदाय चला जो पातालपुरी में अहिरावण जिसको स्वीकार करते थे। तो वह जब देखो एक कर्त्तव्यपारायण महापुरूष का जन्म हुआ तो

यह सब रूढ़ियां उन्होंने नष्ट कर दी और उन्होंने देखो अपनी संस्कृति का प्रसार करते हुए वेदज्ञ बनाते हुए संसार को, अपनी अयोध्या को ऊर्ध्वा में ले गये।

तो विचार, आज मैं इसलिए पूज्यपाद-गुरुदेव! के इन विचारों को पुनः से उद्‌गीत गाने चला आया हूँ क्या इसलिए राजा यदि हो और राजा देखो बुद्धिमान हो तो इन रूढ़ियों का समाप्त कर देना चाहिए और रूढ़ियां कैसे समाप्त होगी? जब रूढ़ि समाप्त होगी देखो जब राजा ब्रह्मवेत्ता होगा उसका निर्वाचन पवित्र होगा जैसे पूज्यपाद-गुरूदेव? अभी अभी प्रगट करा रहे थे। मानो देखो निर्वाचन जब भी होता है ब्रह्मवेत्ताओं के द्वारा होता है और ब्रह्मवेत्ता ही निर्वाचन करते रहे है। परन्तु देखो मेरे हृदय में यह प्रायः वेदना रहती है मेरी प्यारी माताऐं राष्ट्र ये देखो अपना अवशेष करती रही है और वह कितनी विवेकी क्योंकि माताओं का कर्त्तव्य रहा है और देखो आचार्य उनका निर्वाचन करता रहा है। तो विचार-विनिमय क्या मैं विशेषता में तो नही केवल देखो आज यह देखो कि मैं अपने वाम-मार्ग काल में देखो द्रव्य का सदुपयोग होना यह मैं सौभाग्य स्वीकार करता हूँ। यह देखो जो याग जैसे क्रियाकलापो को पुनः से अपने अन्तर्हृदयों में अपनाने का प्रयास करते है और वह द्रव्य का सदुपयोग करते है, देवपूजा में परणित करते है वह द्रव्य का सदुपयोग है। तो मेरा यह क्या हे! यज्ञमान तेरे गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता रहे और तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। इस अखण्डता के ऊपर मैं सदैव अपने विचार व्यक्त करता रहता हूं। तो विचार-विनिमय क्या हमारी प्रणाली पवित्रता को धारण करती हुई और पूज्यपाद-गुरुदेव! ने अभी-अभी धर्म को कहा है। आधुनिक काल का राष्ट्र कहता है कि हम धर्म-निरपेक्ष है। अरे! भोले राजा तू धर्म को जानता नहीं यदि जानता हुआ होता तो तू धर्म से विमुख नहीं होता तो मानों देखो यदि तू अपने धर्म को ही नहीं जानता कि धर्म क्या है तो मानों तू और क्या जान सकता है। क्योंकि धर्म को देखो कहीं शिवालयों में स्वीकार कर

लिया है कहीं देखो वह मोहम्मद के मानने वाले जिनको वह देखो ईश्वर का गृह कहते हैं, कहीं ईशु के मानने वाले ईशु में धर्म, ईशु में ईश्वर को दृष्टिपात करते हैं, वहीं धर्म है, तो इस प्रकार के जो राजा है वह धर्म को न जाने करके अपने को धर्म-निरपेक्ष कहते हैं। धर्म को नहीं जानते क्योंकि शिक्षा-प्रणाली अशुद्ध हो गई है। आचार्य जब धर्म को यह कहते हैं **अविराम भूतम् ब्रह्मे** हे! ब्रह्मचारी तू अपनी इन्द्रियों के विषयों को मुझे प्रदान कर। जब वह इन्द्रियां ही देखो किसी को प्रदान नहीं की गई तो वह धर्म को क्या जान सकेगा। धर्म वह जानता है जो इन्द्रियों के विषयों को जानता है। धर्म वह जानता है जो इन्द्रियों के कर्त्तव्यों को जानता है। धर्म वह जानता है जो मानो ब्रह्मवेत्ता होता है। मेरे पूज्यपाद-गुरुदेव! ने अभी अभी प्रगट कराया धर्म मानो देखो किसी शिवालय में नहीं होता, धर्म किसी गृह में नहीं होता। धर्म देखो! अप्रतम् जिसे देखो **अन्धः वृति** वह देखो मोहम्मद के मानने वालों के गृह में नहीं होता ईश्वर, ईश्वर मानों देखो ईशु नहीं होता। देखो धर्म और देखो अमृतम् तो वह होता है जो इन्द्रियों में कर्त्तव्यपारायणता में समाहित होता है, वह धर्म है। वह मोहम्मद के मानने वाला हो, चाहे ईशु के मानने वाला हो, चाहे वह देखो किसी भी सम्प्रदायों में रत्त रहने वाला हों वह धर्म देखो प्रत्येक इन्द्रियों में समाहित रहता है। अरे! भोले प्राणियों धर्म को विचारों। अरे! राजन्! तू देखो उन इन्द्रियों का प्रसार कर और इन्द्रियों के धर्म का बखान कर देखो तेरे यहां से रूढ़ि चली जायेगी। जब तक रूढ़ि नहीं जायेगी जब तक तू स्वतः ब्रह्मवेत्ता नहीं होगा, वेदज्ञ-ज्ञान रूपी प्रकाश तेरे अर्न्तहृदय में नहीं होगा। जब तक मानों तू रूढ़ियों को नष्ट नहीं करेगा और रूढ़ियां नष्ट नहीं होगी देखो एक दूसरा प्राणी रक्त का पिपासी बना रहेगा और जब द्वेष की अग्नि प्रचण्ड रहेगी वह अग्नि एक समय मानव का, राष्ट्र का दाह कर देगी। एक समय आएगा कि राष्ट्रवाद समाप्त हो जाएगा। मैं अपने पूजापाद गुरुदेव! से यह वाक् प्रगट करने चला हूं क्या धर्म अपनी स्थली पर धर्म

रहता है। वह धर्म देखो इन्द्रियों का एक विषय है, वह ज्ञान का विषय है, वह विवेक का विषय है उसे विवेक मुक्त हो करके मानव को चिन्तन में लाना चाहिए। अब मैं अपने पूज्यपाद-गुरुदेव! से आज्ञा पाऊंगा। विचार-विनिमय क्या मंगलम ब्रहे मैं इसलिए आज्ञा पा रहा हूं मुझे सुविचार विशेष नहीं देना है केवल पुनः से हे! यज्ञमान तू अपने गृह में द्रव्य का सदुपयोग करता रहे और **आनन्दम् ब्रह्मे मंगलमय** तेरा जीवन हो इसके साथ मैं अपने विचारों को व्यक्त कर रहा हूं।

पूज्यपाद-गुरुदेव

मेरे प्यारे! ऋषिवर अभी-अभी मेरे प्यारे! महानन्द जी ने अपने विचार दिये। उनके विचारों में बड़ी मार्मिकता और बड़ी विचित्रता है। जो सूक्ष्म से शब्दों में वह अपने ऐसे गम्भीर अपने ऐसी वार्ता प्रगट कर जाते हैं जिनमें राष्ट्र एक सूक्ष्म से आवेशों में निहित रहता है। तो इसके साथ आज का यह वाक अब समाप्त होने जा रहा है। **आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह क्या यह संसार परमात्मा का जगत है और यह एक प्रकार की यज्ञशाला है, देखो मानव शरीर भी यज्ञशाला है और यज्ञ को हमें विचारना है** और हम देखो ऐसे वसुओं का अपने में वसु बन करके अपने में ही अपने को धारण करना चाहिए। यह आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन।

ओ३म् देवा आभ्याम तनु गायन्त्वाः आपा रथम् मानाः।
ओ३म् सर्वगतं आप्यां देवा आभाः।
ओ३म् सर्वंगतं त्वा वाचश्शरणं ब्रह्म वायाः।

अच्छा भगवन्!

दिनांक : २३-१-६२
स्थान : ग्राम-भदौली, गाज़ियाबाद।

॥ ओ३म् ॥

यज्ञ

ज्ञान हमें किसी का आसरा लेने से आएगा। जब हम किसी के सहायक बन जाएँगे। जब किसी के सेवक बनकर चलेंगे। हमें सेवक बनना है तो प्रभु के द्वारा सब कुछ अर्पण करना है। आप प्रभु के द्वारा कौन सा पदार्थ अर्पित कर सकते हैं? प्रभु के द्वारा जाएँ तो कौन-सा पदार्थ अर्पित कर सकते हैं? वह कौन-सा अमृत प्रभु ने हमारे द्वारा दिया जिसको लेकर हम प्रभु के द्वारा जाएँ? वह है बेटा! 'यज्ञ'।

हम साँसारिक भौतिक यज्ञ करते हैं। इस यज्ञ की वासनाएँ उसमें जो पवित्र आहुति देंगे वह देवताओं तक जाएगी। हमारे द्वारा जो प्राण सत्ता है वह पवित्र होगी। प्राण पवित्र होंगे तो हमारे मल विक्षेप शान्त होंगे और हमारी आत्मा निर्मल और उज्जवल बन करके उस परमात्मा के द्वारा ले जाएगी। परमात्मा के द्वारा ले जाएगा अपना किया हुआ ऊँचा स्थल। मुनिवरो! परमात्मा का ऊँचा स्थल क्या है? वह है ज्ञान।

मुझे महात्मा अगस्त्य की वार्ता बारम्बार कंठ आती रहती है। हे माता! तू अगस्त्य को उत्पन्न कर। हे माता! तू इस संसार में आई है तो इस यज्ञ को कर, तू अगस्त्य जैसे को उत्पन्न कर, जिस महात्मा अगस्त्य ने तीन बार आचमन करते ही समुद्र को पान कर लिया था। आज तू उस महात्मा को क्यों उत्पन्न नहीं करती है? हू माता पार्वती तू कहाँ है? हे दुर्गे तू कहाँ है। हे माँ! तू कहाँ है? तू परमात्मा से मिलान कराने वाली है। तू किस स्थान पर जा पहुँची है? मुनिवरो! महात्मा अगस्तय ने तीन आचमन किए, वे क्या हैं? वे हैं ज्ञान, कर्म और उपासना। महर्षि अगस्त्य ने ये तीन आचमन किये और संसार रूपी समुद्र को पान किया। आज हम भौतिकवाद में हैं, आत्मिक विचार नहीं किया। यह संसार समुद्र है। जो मनुष्य इस समुद्र में लालायित हो जाता है वह समुद्र में गोते ही लगाता रहता है। वह बारम्बार अपने जीवन को समाप्त करता है। महात्मा

अगस्त्य ने कहा था कि जब मानव इस संसार रूपी समुद्र को पान करके आगे बढ़ता है तो वास्तव में उसका कल्याण होगा।

बेटा! उच्चारण करते-करते बहुत दूरी चले गए। उच्चारण कर रहे थे यज्ञाः। आज हमें यज्ञ करना है। हमारे द्वारा जो भी कुछ है वह सब ही कुछ यज्ञ है। मन है, यह भी यज्ञ है। 'इन्द्रियां' यह भी यज्ञ हैं। भौतिक यज्ञ करने के लिए जो द्रव्य हमारे द्वारा है वह भी यज्ञ है। आज हमें इसका सदुपयोग करके चलना है यह सब यज्ञ है। हमारे द्वारा परमात्मा की दी हुई जो सामग्री है वह सब यज्ञ है। परन्तु आज हमें विचारना है कि इनमें से हमें कौन-सा यज्ञ करना है जिससे हमारा कल्याण होगा। जब भौतिक यज्ञ के पश्चात् आत्मिक यज्ञ करेंगे तो हम परमात्मा से मिलान कर सकेंगे। एक समय वह होगा बेटा! जब हम परमात्मा की गोद में होंगे।

मैं तो प्रभु से कहा करता हूँ कि हे प्रभु हम कैसे अभागे हैं संसार में। मैं तो वह कर्म करना चाहता हूँ जिस कर्म को करके प्रभु! मैं तुम्हारी गोद में आ जाऊँ। भगवन्! मैंने आज से पूर्व काल में जो पाप किया है उसे क्षमा करो। आज मैं क्षमा चाहता हूँ। प्रभु तू आज मुझे अपनाकर अपनी गोद में ले।

मुनिवरो! जब वह ज्ञान ही हमारे द्वारा न होगा तो प्रभु की गोद में कैसे प्राप्त होंगे? आज हम अपनी वाणी से उच्चारण तो कर रहे हैं कि प्रभु तू मुझे अपनी गोद में ले और अपनी लोरियों में आनन्दित करा। परन्तु जब हमारा आत्मा निर्मल और पवित्र हो जायेगा तो उस समय परमात्मा स्वयं अपने इस प्यारे पुत्र आत्मा को अवश्य अपना लेगा। जैसे मुनिवरो! माता-पिता अपने प्यारे योग्य बालक को जानकर स्वयं अपना लेते हैं। इसी प्रकार जब यह आत्मा परमात्मा के योग्य हो जायेगी तो यह परमपिता परमात्मा इस आत्मा को अवश्य अपनायेगा। ऐसा कदापि नहीं हो सकता कि न अपनाये। वह इस आत्मा का पिता है। जब यह आत्मा निर्मल, पवित्र और दुर्गणों से रहित हो जायेगा और वह परमात्मा इस आत्मा को अवश्य अपनी गोद में धारण करेगा। अपनायेगा उसी काल में जब हम उस प्रभु की आज्ञा में कर्म करेंगे। आज मानव को परमात्मा द्वारा जाने के लिए तथा मानसिक शान्ति पाने के लिए सबसे ऊँचा कर्म जो

हमारे ऋषि-मुनियों ने, सबने कहा है कि यदि तुम्हें आज उच्च बनना है तो अपने जीवन को यज्ञ जानो, अपने जीवन को यज्ञमन जानो। आज संसार में जो भी मनुष्य आता है भोग भोगने के लिए आता है परन्तु मेरे प्यारे महानन्द जी कहा करते हैं कि आधुनिक काल में तो भोगों ने इन्हें भोग लिया है। जब मुझे महानन्द जी के यह वाक्य कण्ठ आते हैं तो विचार आता है कि मेरे प्यारे क्या वाक्य कहा करते हैं? कैसे सुन्दर इनके वाक्य हृदयग्राही हैं।

मुनिवरो देखो! मनुष्य भोग भोगने के लिए आता है। परन्तु जो भोगों को अपना जीवन दे देता है वह मनुष्य नहीं कहलाता, वह तो एक प्रकार का पशु कहलाता है। संसार में आज हमें मानव बनना है। भोगों को भोगते हुए हमें अपने जीवन को यज्ञपय व्यतीत करना है। हमें वेद रूपी गंगा में स्नान करना है। वेदों का स्रोत उस परमात्मा ने आज नहीं सृष्टि के प्रारम्भ में दिया है। इसके ज्ञान-विज्ञान पर अनुसन्धान करके चलना है।

राजा रावण से एक समय महर्षि क्रूकेतु ऋषि महाराज ने एक प्रश्न किया कि क्या तुमने वेदों को जाना है? रावण ने कहा कि महाराज मैं वेदों को अच्छी तरह जानता हूँ। जब महर्षि बोले तुमने वेदों को कैसे जाना है? कौन से स्थल का जाना है? राजा रावण ने कहा कि प्रभु! वह परमात्मा का अमूलय ज्ञान है। परमात्मा की उसमें अमूल्य निधि है। तब महर्षि ने कहा कि वेदों में और कुछ क्या है? तो राजा रावण ने कहा कि वेदों में संसार का ज्ञान विज्ञान है। वह ज्ञान क्या है? भगवन्! ज्ञान-विज्ञान यह है कि संसार का ज्ञान करो और उसके पश्चात् भौतिक ज्ञान द्वारा देखो इस संसार को। उस समय ऋषि ने कहा कि अरे भौतिक ज्ञान द्वारा देखो इस संसार को। उस समय ऋषि ने कहा कि अरे भौतिक विज्ञान से नहीं देखा जायेगा संसार। आज तुम सबसे पूर्व ज्ञान करो और ज्ञान के पश्चात् आन्तरिक भावना को जानो। इस आत्मा को मेरुदण्ड में ले जा करके इस आत्मा का परमात्मा से मिलान कर दो। जब यह आत्मा परमात्मा की गोद में जायेगा तब जानो कि संसार का यज्ञ करना तुम्हारा सफल हुआ है। उस समय तुम्हारा भौतिक और आत्मिक यज्ञ करना सफल हो जायेगा।

उस समय वह आत्मा इस संसार को भली-भांति देख सकता है जो परमात्मा ने रचाया है। इसके सब विज्ञान को जानने वाला बन जाता है।

तो मुनिवरो! यह है आज का हमारा आदेश अब यह समाप्त होने जा रहा है क्योंकि समय भी अधिक हो चुका है। हम उच्चारण कर रहे थे कि हे परमात्मा तू कल्याण करने वाला है। आज हमारा जीवन यज्ञमय हो। यज्ञ वह है जो हमें भौतिक विज्ञान में लगाता है। यज्ञ वह है जो हमें मानव जीवन की प्रेरणा देता है। आज हमें पुनः से दोनों प्रकार के भौतिक और आत्मिक यज्ञ को करना है।

मुनिवरो देखो! आज से बहुत पूर्व काल हुआ जब हमें कुछ यज्ञ कराने का सौभाग्य मिला। मुनिवरो! उस काल में जब कजली वन में रमण किया करते थे। **पर्वतों पर यज्ञ करने वाले पर्वतों में यज्ञ करते हैं। संसार में यज्ञ करने वाले संसार में यज्ञ करते हैं। राजा भी यज्ञ करता है।** यदि राजा यज्ञ करता है तो प्रजा भी करती है और यदि प्रजा करती है तो संसार का कल्याण हो जाता है। जब प्रत्येक मानव प्रत्येक देवकन्या यज्ञ में संलग्न हो जायेगी और जानेगा कि मेरा जो द्रव्य है, मेरा जो मन है, मेरे जो नेत्र है, मेरे जो श्रोत्र हैं, मेरी घ्राण है, मेरी जो वाणी है, त्वचा व उपस्थ इन्द्रियाँ हैं यह सब कुछ परमात्मा ने मुझे यज्ञ के लिए ही दी है। इन सब इन्द्रियों से यज्ञ करना है। परमात्मा ने मुझे भुजायें क्यों दिये हैं? दूसरों पर परोपकार करने के लिए, अपनी रक्षा करने के लिए। इन भुजाओं से देवताओं को आहुति देने वाले बनें। देवता उसे पान करेंगे तो हमारी भुजायें बलिष्ठ होंगी। भुजायें बलिष्ठ होंगी तो परोपकार भी कर सकते हैं और अपनी रक्षा भी स्वयं कर सकते हैं। तो मुनिवरो! उच्चारण करते-करते बहुत दूरी चले गये। उच्चारण कर रहे थे 'यज्ञा'। हे भगवान्! तू यज्ञ को देने वाला है, प्रेरणा देने वाला है भगवान्! वह प्रेरणा दो जिससे हम अपना और इस संसार का कल्याण कर सकें। जब विधाता की दया होती है तो हमारी आन्तरिक भावना उज्ज्वल और पवित्र हो जाती है यह है मुनिवरो! आज का हमारा आदेश। सौभाग्य मिला तो शेष वाक्य कल होंगे।

पूज्यपाद गुरुदेव

(यज्ञ प्रसाद अर्थात यज्ञ का महत्व, दिनाँक 7 नवम्बर 1963)

॥ ओ३म् ॥

रक्षाबन्धन

मेरे प्यारे महानन्द जी मुझे कुछ प्रेरित कर रहे हैं, इनकी कुछ प्रेरणाएं आ रही हैं यह श्रावणी पर्व के उपलक्ष में कुछ उद्‌गीत गाना चाहते हैं और यह इनकी प्रेरणा है कि 'राखीय प्रह्म वाचन' यह बन्धन सूत्र कैसा है। यह बन्धनसूत्र महान पवित्रता की एक धारा है; क्योंकि यह जो मानव का शरीर है इसमें एक-एक परमाणु है और यह परमाणु सूत्र में पिरोया हुआ है। यह मानव शरीर का निर्माण हो गया है, जो कि इस शरीर में प्रवाह गति कर रहा है, वह परमाणु गतियों में गतिशील हो रहा है, वह कितना प्रिय सूत्र है।

ऐसी सामाजिक पद्धतियों में जब हम परणित हो जाते हैं, तो यह सब सूत्र कहलाते हैं, ''मात्राणि भवे सम्भवव्रहे वाचन् कृतिमान देवाः''। यह सर्वत्र ब्रह्मांड एक सूत्र की भांति है और यह सूत्र अपना क्रिया-कलाप कर रहा है। बाह्य जगत् के ऊपर में भी एक सूत्र अपना क्रिया-कलाप कर रहा है। प्रत्येक प्राणी अपने-अपने सूत्र में पिरोया हुआ है, उसी में वह क्रिया कलाप हो रहा है उसी में वह जीवन की सत्ता को प्राप्त कर रहा है।

आज में कोई विशेष चर्चा नहीं प्रकट करूंगा; केवल आज का विचार हमारा यह कह रहा है कि हम यज्योमयी हैं यह संसार एक प्रकार की यज्ञशाला है। यज्ञमान यज्ञशाला में विद्यमान हो करके अपने जीवन को ऊर्ध्वा में पहुंचाने की प्रेरणा में लगा हुआ है, संसार के वैभव की चर्चा नहीं कर रहा है, आत्म-कल्याण की चर्चा कर रहा है। आत्मवत् अपने में महान् बनने के लिए सदैव तत्पर होना चाहिए।

मेरे प्यारे महानन्द जी कुछ दो शब्द की विवेचना करें, क्योंकि इनकी सदैव कामना रहती है यह राष्ट्रीय चर्चाएं करते रहते हैं, मानवीय समाज

की भी चर्चाएं करते रहते हैं। परन्तु इनकी चेष्टा अनुशासन में लाने की रहती है। हम प्रायः यह कहते रहते हैं कि अनुशासन मानवीयता का एक स्वाभाविक गुण कहलाता है। अनुशासन में आना यह प्रियतम कहलाता है। अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे।

पूज्य महर्षि महानन्द जी के उद्‌गार

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव, मेरे भद्र ऋषि मण्डल, मेरे भद्र समाज! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे, जैसे एक सागर हे उसे गागर में सागर को भरण कर रहे हैं, और हमें ऐसा प्रतीत होता है कि गागर में सागर की ही कल्पना प्रत्येक मानव के जीवन में प्रायः आती रहती है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी-अभी कुछ सूत्रों की चर्चाएं की हैं। श्रावणी पर्व के ऊपर भी उन्होंने कुछ अपना महत्व प्रकट किया कि श्रावणी पर्व क्या है।

इस संबंध में आज अपने पूज्यपाद गुरुदेव से तो नहीं, परन्तु जो विचार यह संसार में दृष्टिपात आया है, इस श्रावणी पर्व के संबंध में भिन्न-भिन्न प्रकार की कल्पना यह कहती है। काल्पनिक पुरुषों में एक कल्पना यह रहती है कि महाभारत के काल में जब अभिमन्यु युद्धभूमि में संग्राम के लिए पहुंचे तो वह महामाता कुन्ती के द्वार पर पहुंचे और उन्होंने अभिमन्यु के एक भुज में एक सूत्र को सूत्रित किया और यह कहा कि जब तक यह सूत्र तुम्हारे भुजों में रहेगा तब तक युद्धभूमि में तुम्हें कोई विजय नहीं करेगा।

एक मानवीय धारा यह कहलाती है। परन्तु द्वितीय यह है कि भगिनी विधाता के द्वार पर जाती है और वह उनके भुजों में एक बंधन सूत्र सूत्रित कर देती है और यह कहती कि मैं जिस समय तक तेरा प्राण है आत्म रक्षा करती हूं। शरीर परिवर्तन हो सकता है परन्तु वेदों में सूत्र सूत्रित कर रहे हैं इसका परिवर्तन नहीं हो सकता, यह इनकी कल्पना मानी गई है।

द्वितीय कल्पना यह है कि श्रावणी पर्व यह पूर्णिमा के दिवस है पूर्णिमा के दिवस में श्रावणी समाप्त हो जाती है और भाद्रपद का प्रारम्भ हो जाता है, प्रारम्भ होने के लिए तत्पर हो जाता है, तो एक कल्पना यह

है कि यह श्रावणी पर्व समाप्त हुआ और भाद्रपद का प्रारम्भ हो गया। ऋषि अपने विशुद्ध रूप में परणित होने लगे, विशुद्ध रूप में कृषि महान् बनने लगी।

चतुर्थ पक्ष है वह स्वीकार करता है कि यह वेद के पठन-पाठन के समय, वेद का पठन-पाठन क्यों होना चाहिए? श्रावणी पर्व पर तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो उसका उत्तर दे नहीं पाये, वे तो सूत्रों में ही रह गये, परन्तु मेरा तो यह विचार है कि यह जो श्रावणी पर्व पर वेदों का पठन-पाठन होता है। ऋषि मुनियों ने ऐसा माना है कि सबसे प्रथम दिवस में ऋक की उत्पत्ति हुई।

ऋक कहते हैं वेदों की उत्पत्ति को, जो ऋकरूपी वेद का जन्म होता है, जन्म क्या जहाँ जन्म की प्रतिभा आती है यदि उसको हम ईश्वरीय ज्ञान स्वीकार करते हैं, तो जन्म की उत्पत्ति का कारण क्या बनेगा क्योंकि यह तो ईश्वरीय ज्ञान है और ईश्वरीय यह कि संसार की रचना है, जब संसार की रचना, ईश्वरीय ज्ञान की रचना, दोनों का एक ही काल कहा जाता है उसकी रचना का प्रश्न ही समाप्त हो जाता है।

जब हम और गम्भीरता में जाते हैं तो इसके ऊपर अनेकानेक बुद्धिमान जन सब विद्यमान हो करके वेद का पठन-पाठन करते हैं, इसकी उपलब्धि के सम्बन्ध में यह नहीं कहा जा सकता परन्तु विचार यह है कि सब महापुरुष अपनी-अपनी स्थलियों पर रहते हैं, पुरोहितजन वर्षाकालीन समय में अपने-अपने गृह में यज्ञ करते हैं।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव को तो यह सब प्रतीत है, परन्तु मैं घृष्टता कर रहा हूँ जो यह वाक् उच्चारण करने के लिए मैं तत्पर हो गया हूं। परन्तु जब मैं आया हूं इसके सम्बन्ध में अपने विचार अवश्य व्यक्त करूंगा। आज का हमारा विचार श्रावणी पर्व के उपलक्ष्य में है; वाक्यों में जो कल्पना करते हुए कल्पना भी यथार्थता में रत रहती है। परन्तु देखो जो वास्तविक रूप होते हैं वह भी अपनी स्थलियों पर निहित होते हैं।

विचार यह आता है, पूज्यपाद गुरुदेव ने भी मुझे कई समय वर्णन कराया है जहाँ मैं ब्रह्मसूत्र की चर्चा करता हूँ जहाँ मैं इस श्रावणी पर्व के उपलक्ष्य में मैं बन्धन सूत्र की चर्चा करता हूँ उस मानव को बन्धन, वह

एक सूत्र कहलाता है जिस बन्धन में इस सूत्र में मानव सूत्रित हो रहा है अथवा वह पिरोया हुआ प्रतीत होता है। परन्तु देखो यह भी मेर विचार में कोई प्रियतमा का विषय नहीं है। परन्तु विचार केवल यह है कि यह जो अनुभव हो रहा है वह जो पर्व है वह किसलिए, इस प्रकार हम उपलक्ष के रूप में, हम याग के रूप में इसकी उद्गीतता में परणित जाते हैं।

हमारे विचार में तो यह आता है कि इस समय सृष्टि का प्रारम्भ हुआ, सृष्टि के प्रारम्भ के समय यह विचार गया कि हमें सृष्टि करनी है हमें इस संसार में प्रभु के राष्ट्र को सुगन्धि में ले जाना है, दुर्गन्धि को समाप्त कर देना है। तो दुर्गन्धि और सुगन्धि में यह परिवर्तन परिवर्तित होता रहता है। यह जो परिवर्तन हो रहा है वह महान और विचित्रता में परणित होता है, परन्तु यह वास्तव में विचारा जाए, कल्पना करने के लिए तो यह सर्वत्र ब्रह्मंड को एक सूत्रवत् माना गया है।

जैसे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने प्रगट किया है क्योंकि राजा प्रजा के लिए सूत्र है, और प्रजा राजा के लिए सूत्र है, पति-पत्नी के लिए सूत्र है, पत्नी पति के लिए सूत्र कहलाता है। वास्तव में देखो, माता पुत्र के लिए सूत्र है और पुत्र के लिए माता सूत्र कहलाती है। इसी प्रकार वास्तव में तो यह आचार्य और ब्रह्मचारी दोनों एक-दूसरे के पूरक में सूत्रित की कल्पना करते रहते हैं। प्रायः वास्तव में तो मुझे ऐसा दृष्टिपात आता है कि यह संसार एक-दूसरे में सूत्रित हो रहा है।

श्रावणी का पर्व पूर्णमा का एक दिवस है। चन्द्रमा अपनी सम्पूर्ण कलाओं से युक्त होता है, सृष्टि के प्रारम्भ में जब सृष्टि का प्रादुर्भाव होता है तो ब्रह्मांड की रचना होती है, जब ब्रह्मांड की रचना होती है, तो उस ब्रह्मांड की रचना के साथ सूर्य से प्रकाश मिलता है, सूर्य द्यौ से प्रकाश लेता है और सूर्य का जो प्रकाश है वह चन्द्रमा में जा करके उद्भुत होता है। चन्द्रमा अपनी समस्त कलाओं से युक्त हो जाता है। चन्द्रमा अमृत को बिखेरता है।

जैसे वेद के पठन-पाठन करने वाला पठन-पाठन की प्रतिक्रिया में बह रत रहता है। परन्तु उनकी पठन-पाठन की जो प्रतिक्रियायें हैं, पठन पाठन का जो एक उद्घोष है, वह एक महानता में परणित हो जाता है। इसी

प्रकार चंद्रमा अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त है। ऐसे में हमारा जीवन भी सम्पन्न कलाओं से युक्त होना चाहिए। श्रावणी पर्व के ऊपर एक पक्ष और मेरे विचार से आया कि इस दिवस वेद रूपी प्रकाश का प्रादुर्भाव हुआ। वेद के प्रार्दुभाव को, वेद का ज्ञान जो कि निष्पक्ष ज्ञान होता है उसकी उपलब्धियाँ मानव के हृदयों में उत्पन्न होने लगीं, क्योंकि मानव का हृदय निष्पक्ष होना, एक बड़ी महानता की एक गाथा कहलाती है।

जब विचार आता है यह कोई न कोई पक्ष में चला ही जाता है, परन्तु देखो यहां एकोकी पक्ष रहता है, वेद के प्रकाश का एकोकी पक्ष रहता है। जो इसे अपना लेता है, वही प्रकाश में रत हो जाता है, वह अपनी रूढ़ियों को अपनी त्रुटियों को त्याग करके महत्वता में परणित हो जाता है। वह जो महत्व है वह मानवीयता की एक धारा में प्रायः रत हो जाता है। मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कई कालों में वर्णन करते हुए अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि यह जो वेद का ज्ञान है, इसके प्रादुर्भाव की प्रतिक्रियाएं परम्परा से चली आ रही हैं।

यह सूत्र क्यों परणित किया जाता है, मानव सूत्र का एक ही प्रतीक है, धर्म और मानवता की परम्पराओं से रक्षा होनी चाहिए। रक्षा का यह प्रतीक है जो रक्षा नहीं कर पाते, वह सूत्र के अधिकारी नहीं होते।

मैं श्रावणी पर्व के पवित्र दिवस पर आज दृष्टिपात कर रहा हूं। इस दिवस को मैं परम्परागतों से स्वीकार करता रहता हूं। यह वह दिवस है जिस दिवस में परमात्मा की पवित्र विद्या जो वैदिक ज्ञान है उस वैदिक मन्त्रात्माओं के लिए साकल्य ले करके, साकल्य यजमान के शब्दों पर, होताओं के उद्गाता उदगीत गाने वालों के शब्दों पर, साकल्य विद्यमान हो करके वायुमंडल के अशुद्ध परमाणु को निगलता रहता है। मेरा अर्न्तहृदय यह ऋषि मुनियों की धरोहर है यह जो याग जैसा कर्म है यह ऋिषि मुनियों की धरोहर है क्योंकि ऋषि मुनि अपने आश्रम को पवित्र बनाने के लिए शुद्ध पवित्र वेदा मन्त्रों के द्वारा उद्गीत गाते रहे हैं।

पूज्य महर्षि महानन्द जी

(दिनाँक 30 अगस्त 1985, लाक्षागृह, बरनावा)

॥ ओ३म् ॥

जन्मदिन की शुभकामनाएं

वैदिक कुमार

श्रीमति पूनम त्यागी व श्री संजीव त्यागी जी निवास स्थान बल्लभगढ़, हरियाणा ने अपने सुपुत्र चिरंजीव वैदिक कुमार के शुभ जन्मदिन के उपलक्ष्य में 5100 रु का सात्विक दान समिति को प्रकाशन के कार्य के लिए प्रदान किया है। श्री त्यागी जी समिति के कार्यों में निरंतर तन-मन-धन से काफी लम्बे समय से सहयोग करते आ रहे हैं और इस सब के साथ मासिक 500 रु का सहयोग भी शुरू से उदारता के साथ प्रदान कर रहे हैं। अर्थात् पूज्यपाद गुरुदेव के सभी कार्यों को ऊर्ध्वगति प्रदान करने में अपना योगदान बड़ी कर्मठता से बनाये हुए हैं।

श्री संजीव त्यागी जी मूल रूप में ग्राम दिनकरपुर, जिला-मुजफ्फरपुर के निवासी हैं और पूज्यपाद गुरुदेव से जुड़ने का सौभाग्य बचपन से ही प्राप्त हो गया था क्योंकि इनके माता-पिता स्व. श्रीमती विशम्बरी देवी व श्री बेगराज त्यागी जी गुरुदेव के अनन्य भक्त थे। माता-पिता की छत्रछाया में और पूज्यपाद गुरुदेव के आर्शीवाद से त्यागी जी अपनी शिक्षा के साथ-साथ अपने जीवन को यौगिक क्षेत्र में भी उन्नति की तरफ ले जाते रहे। आज-कल आप फरीदाबाद में कार्यरत हैं और इसके साथ-साथ पूज्यपाद गुरुदेव के अमूल्य साहित्य का अध्ययन करते हुए उस साहित्य को जन-साधारण तक पहुँचाने में संलग्न रहते हुए अपने व अपने परिवार के जीवन को ऊर्ध्वागति में ले जाने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील हैं।

समिति उनके निरन्तर सहयोगों के लिए उनका व उनके परिवार का हृदय से आभार प्रकट करती है और ईश्वर से उनको परिवार सहित सुख, शान्ति व सर्वतोन्मुखी की प्रार्थना करती है।

वैदिक अनुसन्धन समिति

॥ ओ३म् ॥

आर्शीवाद व शुभकामना

परमपिता परमात्मा की अनुपम कृपा से एवं पूज्यवाद गुरुदेव के शुभ आर्शीवाद से आदरणीय श्री कालूराम त्यागी जी निवासी दिनकरपुर ने अपनी पौत्री आयुष्मति ऋचा (सुपुत्री श्रीमती रश्मि व श्री गुरुबचन शास्त्री जी) का शुभ विवाह चिरंजीव डॉ. आलोक सुपुत्र श्री यतेन्द्र त्यागी व श्रीमती राजकुमारी त्यागी, निवासी ग्राम-चरथावल, जिला-मुजफ्फरनगर के साथ दिनांक 19 अप्रैल 2012 को सम्पन्न किया और उसके उपलक्ष्य में 1100 रु. का सात्विक दान समिति को प्रकाशन के कार्य के लिए अर्पित किया है।

पूज्यपाद गुरुदेव घर त्यागकर जब विचरण करते हुए ग्राम दिनकरपुर पहुँचे तब ही से श्री कालूराम जी का सम्बन्ध उनसे हो गया था और कई वर्षों तक पूज्यपाद गुरुदेव के साथ समय-समय पर भ्रमण करते रहे जिससे त्यागी जी को गुरुदेव के सान्निध्य में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ और उनके साथ हुए अनुभव संस्मरण के रूप में त्यागी जी के पास अमूलय धरोहर के रूप में विद्यमान हैं। त्यागी जी पूज्यपाद गुरुदेव के अद्भुत एवं असीम ज्ञान से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने अपना जीवन ही याज्ञिक धारा की तरफ मोड़ दिया और उसी को ऊर्ध्वागति देते हुए अपने इकलौते पुत्र को पूज्यपाद गुरुदेव की छत्रछाया में उनके गुरुकुल में शिक्षा प्रदान कराई जो कि शिक्षा पूर्ण होने के पश्चात् उसी गुरुकुल में अध्यापन के कार्य में कार्यरत हैं और इसके साथ-साथ समाज में यज्ञों

का कार्य सम्पन्न कराते हुए अपने व समाज के जीवन को निरन्तर वैदिक संस्कृति को ऊर्ध्व गति देने में सलग्न हैं। जैसा कि ऋषि-मुनियों ने सभी के लिए आदेश भी दिया है। परम्परा से ऋषि-मुनि स्वयं भी अपने जीवन को ऊर्ध्वागति में ले जाते हुए समाज के कल्याण के लिए अपने जीवन की आहुति देते हुए बलिदान होते रहे हैं। समाज इस प्रकार की महान आत्माओं का ऋणी है।

समिति नवदम्पत्ति व दोनों परिवारों की सुख, शान्ति, सर्वतोन्मुखी समृद्धि के लिए ईश्वर से हृदय से प्रार्थना करती है और सहयोग के लिए आभार प्रकट करती है।

वैदिक अनुसन्धन समिति

॥ ओ३म् ॥

जन्मदिन की शुभकामनाएं

श्रीमति सुमित्रा देवी निवासी अल्कापुरी, हापुड़ ने अपने पौत्र चिरंजीव शमीक त्यागी के जन्मदिन के शुभ अवसर पर 2100 रु का सात्विक दान समिति के प्रकाशन के कार्य के लिए अर्पित किया है। प्रिय शमीक श्री विवेक त्यागी व श्रीमति कंचन त्यागी जी के ज्येष्ठ पुत्र हैं। यह परिवार प्रारम्भ से ही पूज्यपाद गुरुदेव के स्नेह का पात्र रहा है और अपने घर पर याग कराने का सौभाग्य इनके स्व. पिता श्री रूप किशोर सहित इस परिवार को प्राप्त हुआ है। पूज्यपाद गुरुदेव के ब्रह्मलीन होने के पश्चात भी श्री विवेक त्यागी व उनके पिताजी ने चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायज्ञ सहित अनेक बार सार्वजनिक यज्ञों का आयोजन हापुड़ में किया है। ऋषि परम्परा का अनुसरण करते हुए घर पर प्रतिदिन अग्निहोत्र करते हैं और वर्ष में घर पर अनेक बार सामवेद/ यजुर्वेद के यज्ञ को इनकी माता जी आयोजित करा कर अपने परिवार को निरन्तर ऊर्ध्वागति में ले जानेमें प्रयत्नशील हैं।

इस के साथ-साथ पूज्यपाद गुरुदेव के साहित्य का अध्ययन करते हुए यह परिवार उस साहित्य को जन-साधारण तक पहुँचाने में भी निरन्तर गतिशील है। श्री विवेक त्यागी जी समिति के प्रकाशन कार्य में मासिक सहयोग प्रदान करके याज्ञिक कार्यों को प्रोत्साहन देकर अपनी उदारता से जन-कल्याण कार्यों में सहयोग देते हैं।

समिति निरन्तर सहयोग के लिए परिवार के सभी सदस्यों का हृदय से आभार प्रकट करती है और परमपिता परमात्मा से परिवार की सुख, शान्ति व सर्वतोन्मुखी समृद्धि के लिए प्रार्थना करती है।

वैदिक अनुसन्धन समिति

मासिक सहयोग

श्री हरिराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री विवेक त्यागी, अल्कापुरी, हापुड़	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी, सुपुत्रश्री-जयप्रकाशजी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री पूनम त्यागी, नोएड़ा	500 रुपये
श्री वी. पी. सिंह, वसुंधरा, गाजियाबाद	500 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्री नानकचन्द, देहरादून	200 रुपये
श्रीमती शशि गुप्ता, नोएड़ा,	125 रुपये
डॉ. ओ. पी. आर्य, आगरा	125 रुपये
श्री गुलजार सिंह, जगत पुरी, कृष्ण नगर, दिल्ली	100 रुपये
श्रीमती वीना त्यागी, अलीगढ़	100 रुपये
श्री राहुल शर्मा, बैंगलोर	100 रुपये
श्री पराग शर्मा, नोएड़ा	100 रुपये

शृङ्गीऋषि बेवसाईट

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज के प्रवचनों की अमृतवाणी को जन-जन तक पहुँचाने के उद्देश्य से वैदिक अनुसंधान समिति ने बेवसाईट का शुभारम्भ किया है जिसका पता :µ

www.shringirishi.in

वर्ष 40 : अंक : 478
जुलाई 2012

मूल्य :
पाँच रुपये

वर्ष 40 : अंक : 478
जुलाई 2012

मूल्य :
पाँच रुपये

Delhi Postal R. No. DL (S)-01/3220/2012-14

POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-07-2012

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R. No. DL (S)-01/3220/2012-14
Licence to Post without prepayemnt
U (SE)-70/2009-11

उद्‌बोधन

बेटा! मैं उच्चारण कर रहा था कि हम अपने जीवन को यज्ञमय बनाएँ हमारा जीवन परमात्मा ने रचा है, वह दान द्वारा, त्याग और तपस्या द्वारा, यज्ञ कर्म करने के लिए रचा है। अन्यथा इसके रचने का कोई उद्देश्य नहीं। क्योंकि जितने शुभ कर्म मानव शरीर से किये जाते हैं वे और शरीरों से नहीं किये जाते। जब नहीं किये जाते तो भी धर्म करता है वह सब यज्ञ कर्म कहलाता है। परन्तु जहाँ जितने परोपकार के यज्ञ, राष्ट्रीय यज्ञ, सर्वज्ञ यज्ञ होते हैं इन सब यज्ञों में निष्काम यज्ञ श्रेष्ठ होता है। जिसमें कोई कामना न हो, धारणा न हो वह यज्ञ देवताओं के निमित्त किया जाता है। वह अपना एक उद्देश्य और कर्तव्य होता है। कर्तव्य को लेकर के जो कार्य किया जाता है तो बेटा! वह यज्ञ कर्म सर्वश्रेष्ठ कहलाता है।

पूज्यपाद गुरुदेव

(यज्ञ प्रसाद अर्थात यज्ञ का महत्व प्रवचन दिनाँक-19-07-1966)